International Journal of Multidisciplinary Trends

E-ISSN: 2709-9369
P-ISSN: 2709-9350
www.multisubjectjournal.com
IJMT 2021; 3(1): 130-140
Received: 23-01-2021
Accepted: 26-03-2021

डॉ. श्रीनिवास मिश्र
असिस्टेंट प्रोफेसर "दर्शन शास्त्र"
मदन मोहन मालवीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय भाटपार रानी, देवरिया सम्बद्ध दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
डॉ. श्रीनिवास मिश्र
असिस्टेंट प्रोफेसर "दर्शन शास्त्र"
मदन मोहन मालवीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय भाटपार रानी, देवरिया सम्बद्ध दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

भारतीय तर्कशास्त्र में भारतीय न्यायिको का योगदान

डॉ. श्रीनिवास मिश्र

सारांश

भारतीय तर्कशास्त्र को न्याय दर्शन या न्याय शास्त्र कहा जाता है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से देखने पर 'तर्क शास्त्र' का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। जब से मनुष्य सभ्य होने का दावा करता है तभी से तर्कशास्त्र का जन्म माना जाता है।

परम तत्त्व को या किसी लौकिक तत्त्व को भी समझने के लिए 'तर्क' की बड़ी आवश्यकता होती है। इसलिए श्रुति ने भी 'मनन' को ऊँचा स्थान दिया है। बिना 'मनन' के 'आत्मा' का साक्षात्कार नहीं हो सकता और आत्मा का साक्षात्कार ही दर्शन शास्त्र का मुख्य लक्ष्य है। बुद्धि के विकास के लिए 'तर्क' की अपेक्षा होती है। बुद्धि के ही बल से संसार की वस्तुओं का, सूक्ष्म भावनाओं का तथा औचिन्त्य परम तत्त्व का भी 'ज्ञान' हमें होता है और इस कार्य में 'तर्क' बहुत सहायक होता है। जीवन में यह देखा जाता है कि कभी आपस में और दूसरों के साथ विचार-विनिमय किया जाता है। कभी सत्य बात के समर्थन के लिए और कभी असत्य के खण्डन के लिए हम 'प्रमाणों' की सहायता लेते हैं किन्तु व्यवहार में प्रमाणों के साथ-साथ हमें 'तर्क' भी देना पड़ता है। वस्तुतः किसी सिद्धांत पर पहुँचने के लिए हमें (क) श्रुति या आगम या आप्तवाक्य, (ख) तर्क, (ग) साक्षात् स्वानुभव, इन तीनों की अपेक्षा होती है। इन्हीं को 'श्रवण', 'मनन', 'निदिध्यासन' के नाम से श्रुतियों में कहा गया है। यहाँ हमें ध्यान में रखना चाहिए कि 'तर्क' कोई स्वतंत्र प्रमाण नहीं है, केवल 'तर्क' से ही हम किसी निर्णय पर पहुँच भी नहीं सकते और इसलिए कठोपनिषद्' में कहा गया है केवल 'तर्क' के द्वारा आत्मा का ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता। शंकराचार्य ने ब्रह्मसूत्र' के भाष्य में 'तर्क' का तिरस्कार भी किया, वाक्यपदीय में भर्तृहरि' ने 'तर्क' के परिवर्तित हो जाने की सभी संभावनाएँ भी बताई, किन्तु यह निश्चित है कि बिना 'तर्क' की सहायता से हम निर्णय पर नहीं पहुँच सकते, 'तर्क' प्रमाणों का सहायक है।"

'तर्क' को प्रधान रूप से ध्यान में रखकर जगत् के पदार्थों का विशेष विचार न्याय शास्त्र अथवा तर्कशास्त्र में किया गया है। तर्कशास्त्र की व्याख्या पाश्चात्य दर्शन में और भारतीय दर्शन में भिन्न-भिन्न प्रकार से की गई है। साधारणतः तर्कशास्त्र का मतलब हम पाश्चात्य तर्कशास्त्र से ही लगाते हैं, जो भारतीय तर्कशास्त्र से अपना अलग स्वरूप रखता है। इसलिए पाश्चात्य और भारतीय तर्कशास्त्र को जानना एवं उसके अंतर को जानना आवश्यक प्रतीत होता है।

कूटशब्द: भारतीय तर्कशास्त्र, भारतीय न्यायिको, न्याय शास्त्र

प्रस्तावना

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से देखने पर 'तर्कशास्त्र' का इतिहास अत्यन्त प्राचीन दिखाई पड़ता है जब से मनुष्य सभ्य होने का दावा करता है, तभी से तर्कशास्त्र का जन्म माना जाता है। पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार 'तर्कशास्त्र' को Logic के नाम से पुकारा जाता है। Logic शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द 'लागस' (Logos) से हुई है, जिसका अर्थ होता है विचार' (Thought) अथवा शब्द (Word)! इसलिए पाश्चात्य दार्शनिकों का कहना है

कि "तर्कशास्त्र वह शास्त्र है जिसका विषय हमारा विचार है और 'विचार' शब्दों के मेल से बनता है। विचार करना मनुष्य का जन्मजात गुण है। जब से हम मनुष्य के रूप में पैदा होते हैं तभी से हम 'विचार करना' प्रारंभ कर देते हैं। हम तर्कशास्त्र पढ़े या न पढ़ें, हमें तो विचार करना आएगा ही। इसलिए तर्कशास्त्र हमारे मन में विचारों को पैदा नहीं करता, बल्कि उसका सुधार करता है।"

पाश्चात्य दृष्टिकोण से तर्कशास्त्र की परिभाषा

ओवर वेग के अनुसार- "तर्कशास्त्र मानव ज्ञान के व्यवस्थापक नियमों का विज्ञान है।"

मिल के अनुसार: "तर्कशास्त्र बुद्धि की उन क्रियाओं का विज्ञान है, जो प्रमाण के मूल्यांकन में उपयोगी है तथा ज्ञात तथ्यों से अज्ञात तथ्यों तक पहुँचने की प्रक्रिया एवं उसमें सहायता देने वाली सभी अन्य बौद्धिक क्रियाओं का विचार करता है।"

आल्ड्रिच के अनुसार: "तर्कशास्त्र तर्क करने की कला है।"

थामसन के अनुसार: "तर्कशास्त्र विचार के व्यापक नियमों का विज्ञान है।"

हैमिल्टन अनुसार: "तर्कशास्त्र विचार के आकार संबंधी नियमों का विज्ञान है।"

हेटले के अनुसार: "तर्कशास्त्र अनुमान करने का विज्ञान एवं कला है।"

आरनाल्ड के अनुसार: "तर्कशास्त्र सत्य के अनुसंधान में लगी हुई बुद्धि का विकास है।"

ई.एम. कापी के अनुसार: तर्कशास्त्र सत्य तर्क को असत्य तर्क पृथक् करता है। करने में प्रयुक्त होने वाले सिद्धांतों और विधियों का अध्ययन करता है।

भारतीय तर्कशास्त्र का इतिहास अत्यन्त ही प्राचीन है। जब से हमारी सभ्यता और संस्कृति का जन्म हुआ है तभी से 'तर्कशास्त्र' का भी जन्म बतलाया जा सकता

भारतीय दर्शन की दृष्टिकोण से 'तर्कशास्त्र' की व्याख्या

भारतीय दृष्टिकोण से तर्कशास्त्र को एक बहुत ही बड़े अर्थ में ग्रहण किया जाता है। इससे भिन्न-भिन्न प्राचीन नाम हैं जैसे- आन्वीक्षिकी। इसका अर्थ है-

> प्रत्यक्षागमाभ्यामीक्षितस्य अन्वीक्षणमन्वीक्षा ।
> तथा - प्रवर्त्तत इत्यान्वीक्षिकी न्याय विद्या न्यायशास्त्रम्
>
> -न्यायभाष्य, सूत्र- 1

अर्थात् न्याय विद्या को ही आन्वीक्षिकी कहते हैं। यह आन्वीक्षिकी प्रत्यक्ष से देखे हुए अथवा शास्त्र से सुने हुए विषयों के तात्विक स्वरूप का ज्ञान कराने वाली विद्या है, इस विद्या का ही नाम न्याय विद्या, न्याय शास्त्र है। आन्वीक्षिकी के अतिरिक्त न्याय विद्या को हेतु विद्या, शास्त्र, तर्कशास्त्र, तर्क विद्या, वाद विद्या, न्याय विद्या, न्याय शास्त्र, प्रमाण शास्त्र, वाकोवाक्य, तक्की, विमंसी, आदि नामों से प्रसिद्ध रहा है।

न्याय का अर्थ

साधारणतः बोलचाल की भाषा में 'न्याय' का अर्थ नियम युक्त समझते हैं। इस प्रकार नियम युक्त व्यवहार ही न्याय है। नियम युक्त व्यवहार ही नियमनिष्ठ आचरण कहलाता है और नियमनिष्ठ आचरण करने वाला न्याय प्रिय अथवा नैतिक व्यक्ति कहलाता है।' इस दृष्टि से हम अपने दैनिक जीवन में 'न्याय' शब्द का प्रयोग नियम युक्त, नैतिक, उचित आदि अर्थों में करते हैं। इसका संबंध व्यक्ति के व्यवहार से लेकर सामाजिक व्यवस्था और न्यायालय के विधान तक से है। यह स्पष्ट होता है कि न्याय शब्द का अर्थ व्यापक है। साधारणतः गौतम मुनि को ही भारतीय तर्कशास्त्र का गुरु माना जाता है। इसका अर्थ यह नहीं लगाना चाहिए कि गौतम मुनि के पहले तर्क विद्या का पूर्ण अभाव था। गौतम मुनि के पहले भी वेद और उपनिषद् काल में लोग वाद-विवाद किया करते थे। इसलिए भारतीय तर्कशास्त्र का समय वैदिक काल भी बतलाया जा सकता है और इस दृष्टिकोण से भारतीय विद्वानों का आज यह दावा है कि भारतीय तर्कशास्त्र का इतिहास संसार में सबसे प्राचीन है। वेद तथा उपनिषदों में तर्क विद्या का चमत्कार तथा उसका अस्पष्ट वर्णन

हमें भले ही देखने को मिलता है, परंतु भारतीय तर्कशास्त्र को सुव्यवस्थित तथा नियमित बनाकर एक शास्त्र' के रूप में बनाने का श्रेय गौतम मुनि को ही जाता है। तर्कशास्त्र' की व्याख्या को वृहत् करने के लिए ही महर्षि गौतम ने न्याय दर्शन' की रचना की है। यो तो न्याय दर्शन में तर्कशास्त्र के अलावा भी बहुत तरह की दार्शनिक बातों का उल्लेख किया गया है, परंतु गौतम का मुख्य उद्देश्य तर्कशास्त्र' का स्पष्ट वर्णन ही था। महर्षि गौतम तर्कशास्त्र' के शब्द का प्रयोग नहीं कर न्यायशास्त्र' का ही प्रयोग करते थे, इसलिए भारतीय तर्कशास्त्र' को न्याय शास्त्र के नाम से पुकारा जाता है। न्याय शास्त्र' को हम न्याय दर्शन' के एक प्रमुख अंग के रूप में पाते हैं। इस प्रकार न्याय शास्त्र का इतिहास महर्षि गौतम से प्रारंभ होता है, जिन्होंने न्याय सूत्र लिखा है। इस पर महर्षि वात्स्यापन का प्रमाणिक भाष्य है, जिसे न्याय भाष्य कहते हैं। उनका कहना है कि- प्रमाणैः अर्थपरीक्षणं न्यायः।[18] अर्थात् न्याय उस प्रणाली का नाम है, जिसमें वस्तु के परीक्षा के लिए प्रमाणों का प्रयोग किया जाता है। आश्रय यह है कि किसी वस्तु या अर्थ का तत्त्व निर्धारण किसी प्रमाण से ही संभव है। यही न्याय का कार्य है अर्थात् न्याय वस्तु या तत्त्व निर्धारण की प्रणाली है। तत्त्व निर्धारण के लिए हमें प्रतिज्ञा आदि पाँच अवयवों अथवा वाक्यों का प्रयोग करना पड़ता है।

> साधनीयार्थस्य यावत शब्द समूहे सिद्धिः परिसमाप्यते,
> तस्य पञ्चावयवाः, प्रतिज्ञादयः समूहपेक्ष्यावयवा उच्यन्ते ।
> तेषु प्रमाणसमवायः। आगमः प्रतिज्ञा, हेतुरनुमानम, उदाहरणं
> प्रत्यक्षम् उपमानमुपमानम्, सर्वेषामेकार्थ समवाये सामर्थ्य प्रदर्शनं
> निगमनमिति । सोज्यं परमौ न्याय इति । एतेन वाद जल्पवितण्डाः
> प्रवर्तन्ते नातोऽन्यथेत । तदाश्रया च तत्त्व व्यवस्था ।
>
> - न्याय सूत्र - 1

अतः इसी पंचावयव या पाँच वाक्यों के समूह का नाम न्याय है ।। इन पाँच वाक्यों में सभी प्रमाणों का समावेश हो जाता है। जैसे प्रतिज्ञा शब्द प्रमाण का, हेतु में आगमन-प्रमाण का, उदाहरण में प्रत्यक्ष प्रमाण का और उपनय में उपमान प्रमाण का, निगमन में सभी प्रमाणों का योगदान रहता है। यह शब्द समूह परम न्याय है। जिसका प्रयोग निर्धारण में होता है। यह शब्द समूह पंचावयव (पाँच वाक्य) है। इस दृष्टि से न्याय और अनुमान एक है अर्थात् न्याय का दूसरा नाम अनुमान है। पंचावयव का प्रयोग परार्थानुमान में होता है। अतः परार्थानुमान भी न्याय ही कहलाता है। संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि प्रमाणों के द्वारा अर्थ परीक्षण की प्रणाली ही न्याय है।

न्याय शास्त्र के भेद

मुख्य रूप से न्याय शास्त्र के दो भेद हैं

वैदिक न्याय शास्त्र और अवैदिक न्याय शास्त्र। इन्हें ही आस्तिक और नास्तिक न्याय भी कहते हैं। पहला वैदिक मान्यताओं का समर्थन करता है तो दूसरा इनका खण्डन करता है। यह भेद वेद की प्रामाणिकता को लेकर है। वेद को प्रमाण मानने वाले आस्तिक और न मानने वाले नास्तिक सभी दर्शनों का अपना न्याय है।

वैदिक न्याय भी कई भागों में विभक्त है, जैसे-गौतम, कणाद ,कपिल, पतंजलि, जैमिनीय आदि। अवैदिक न्याय के भी कई विभाग है- बौद्धन्याय, जैनन्याय आदि। वैदिक न्याय के सभी खण्डों में गौतम का अत्यन्त महत्त्व है, क्योंकि महर्षि गौतम ही न्याय शास्त्र के प्रणेता माने जाते हैं।

वैदिक न्याय के प्रमुख आचार्य: वैदिक न्याय का इतिहास न्याय सूत्र से प्रारम्भ होता है। न्याय सूत्रकार महर्षि गौतम माने जाते है।

> कणादेन तु सम्प्रोक्तं शास्त्रं वैशषिकं महत् ।
> गोतमेन तथा न्यायं सांख्यं तु कपिलेन वै।
>
> -पदम पुराण 2, 4. 2

अर्थात् महर्षि कणाद ने वैशेषिक शास्त्र की, महर्षि गौतम ने न्याय शास्त्र की और कपिल ने सांख्य शास्त्र की रचना की।

महर्षि गौतम का संक्षिप्त परिचय: जैसाकि हम जानते हैं कि न्याय शास्त्र के प्रणेता महर्षि गौतम ही माने जाते हैं। किन्तु इनके जीवनकाल को लेकर मतभेद पाया जाता है। इसी कारण गौतम के संबंध ठीक परिचय देना अत्यन्त कठिन कार्य हो जाता है।

योऽक्ष याद मृषिं न्याय प्रत्यमाद् वदतां वरम् ।
तस्य वात्स्यायनमिंद भाष्य जात मवर्तथत् ॥ - न्याय भाष्य-5
यदक्ष पादः प्रवरो मुनीनां । शमाय शास्त्रं जगतो जगाद ।
कुतार्किका ज्ञान निवृत्ति हेतोः करिष्यते तस्य मया निबंधः ।।

-न्याय वार्तिक- 1/2/3

अक्षपादप्रणीतो हि विततो न्यायपादः ।
सान्द्रामृत रसस्यनद फल संदर्भ निर्भरः ।।

- न्याय मंजरी (जयन्त भट्ट) -3/4

इस प्रकार उपर्युक्त श्लोक से स्पष्ट है कि कुछ लोग इनको 'अक्षपाद' के नाम से भी पुकारते हैं। इस नाम को लेकर एक किम्वदन्ती भी प्रचलित है। महर्षि गौतम सर्वदा शास्त्र चिन्तन में मग्न रहा करते थे, वे अपने विषय में भूल जाते थे। एक बार भ्रमण करते समय वे एक कुएँ में गिर गए। अपने चिन्तन में इस तरह से पड़ी बाधा के कारण उन्होंने ईश्वर की स्मृति की और विधाता ने उनकी कठिनाई को हटाने के लिए उनके पाँवों में देखने की शक्ति दे दी। तभी से वह अक्षपाद कहलाने लगे। इसीलिए न्याय दर्शन को 'अक्षपाद दर्शन' भी कहा जाता है। क्योंकि 'अक्षपाद' शब्द का अर्थ होता है, जिसके पाँव में आँख हो।' उनकी अद्भुत तर्क शक्ति के संबंध में रामायण में एक कहानी भी है। अहल्या के शापोद्धार के प्रसंग में एक कथा का भी वर्णन है। भगवान श्रीराम वन जाने के लिए तैयार थे, कुछ मुनियों ने उन्हें वन जाने से रोकने का प्रयास किया, परंतु भगवान वचनबद्ध थे। अन्त में सभी मुनियों ने महर्षि गौतम से प्रार्थना की, वे श्रीराम को समझाने आए। इन्होंने भगवान से पूछा- आप क्या चाहते हैं ? भगवान ने उत्तर दिया- वनवास। इस पर गौतम मुनि ने प्रश्न किया वनवास से आपका क्या अभिप्राय है ? वनवास शब्द के दो अर्थ हैं- पहला अर्थ है- वनेषु वासः अर्थात् सभी वनों में वास, तो चौदह वर्ष वास निरर्थक है, क्योंकि सभी वनों में वास चौदह वर्ष में समाप्त नहीं होगा। इसका दूसरा अर्थ है- वनेवासः, अर्थात् किसी वन में वास तो अयोध्या के पास के वन में रह जाए। इस वाक्पटुता पर भगवान हंस पड़े। इससे विदित होता है कि गौतम मुनि तर्कपटु माने जाते थे।" इसके संबंध में महाभारत शांति पर्व, अध्याय 265 में कहा गया है- "मेधातिथिर्महाप्राज्ञौ गौतमस्तपसि स्थितः" अर्थात् पत्नी के मर्यादा में अतिक्रमण का विचार कर महान विद्वान् महर्षि गौतम उस समय से तपस्या में अवस्थित हुए। इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि मेधातिथि, गौतम, अक्षपाद आदि एक ही व्यक्ति के नाम थे।

न्याय दर्शन का मूल ग्रंथ गौतम का 'न्याय सूत्र' है। यह ग्रंथ न्यायशास्त्र का प्रथम ग्रंथ है। इसमें पाँच अध्याय है, प्रत्येक अध्याय में आहिक है। सूत्रों की संख्या 500 है। इसमें सभी विषयों को सोलह प्रमेयों के अंतर्गत माना गया है- प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धांत, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास, छल, जाति और निग्रहस्थान । न्याय सूत्र के बाद न्याय भाष्य के अनेक ग्रंथ लिखे गए हैं, जैसे- वात्सयायन का 'न्यायभाष्य', उद्योतकर का 'न्यायवार्तिक', वाचस्पति का न्याय वार्तिक-तात्पर्य टीका', उद्यन की 'न्याय वार्तिक तात्पर्य परिशुद्धि कुसुमांजलि और जयन्त की 'न्याय मंजरी' आदि। इस सभी ग्रंथों में न्याय सूत्र के विचारों की पूरी व्याख्या की गई है।

महर्षि वात्स्यायनः इन्होंने 'न्यायसूत्र' पर प्रमाणिक भाष्य लिखा है, जिसे न्यायभाष्य अथवा वात्स्यायन भाष्य कहते हैं। इस ग्रंथ में स्वयं इन्होंने अपना नाम वात्स्यायन बतलाया है-

योऽक्षपादमृषिं न्यायः प्रत्यभाद् वदतां वरम्।
तस्य वात्स्यापन मिदं भाष्य जातवर्त्तयत् ।। "

-न्याय भाष्य 1/26

इससे विदित होता है कि न्याय भाष्य के सूत्रकार वात्स्यायन है।"

भारद्वाज उद्योतकर: इन्होंने न्याय भाष्य या वात्सयायन भाष्य पर एक प्रमाणिक ग्रंथ लिखा है जिसे 'न्यायवार्तिक' कहते हैं। इसमें न्यायसूत्र और न्यायभाष्य दोनों की व्याख्या है।[12]

अक्षपादः प्रवरो मुनीनां शमाय शास्त्रं जगतो जगाद ।
कुतार्किकाज्ञाननिवृत्ति हेतुः करिष्यते तस्य मया निबंध : ।।

- न्याय वार्तिक- 2

अर्थात् मुनियों में श्रेष्ठ अक्षपाद ने संसार की दुःख निवृत्ति के लिए न्याय सूत्र की रचना की।
आचार्य उद्योतकर ने न्याय वार्तिक के अन्त में लिखा है-

यदक्षपाद प्रतिभो भाष्य वात्सयायनों जगौ ।
अकारि महनस्तस्य भारद्वाजेन वार्तिकम् ।।

अर्थात् इससे भी स्पष्ट है कि भारद्वाज ने वार्तिक की रचना की। इनके नाम के साथ भारद्वाज भी जुड़ा है संभव है यह उनका गोत्र है अथवा नाम हो। इसके संबंध में विवाद है। इन्हें 'पाशुपाताचार्य' की उपाधि मिली थी। पहले पाशुपात संप्रदाय का केन्द्र कश्मीर था, अतः इन्हें कश्मीरी माना जाता है। कुछ लोग इन्हें मिथिला का निवासी मानते हैं, इनका समय भी 300 ई. के आसपास माना जा सकता है। ये दिङनाग, वसुवन्धु, नागार्जुन आदि बौद्ध विद्वानों के बाद हुए; क्योंकि इन्होंने बौद्ध विद्वानों का खण्डन किया है।

श्रीवाचस्पति मिश्र - ये मिथिला के बहुत बड़े विद्वान थे। इन्होंने सभी दर्शनों पर टीकाएँ लिखी हैं। 'न्याय सूची निबंध' की रचना 976 ई. में इन्होंने की। इन्हें विद्वान लोग 'सर्वतन्त्र स्वतंत्र' कहते हैं। उद्योतकर के 'वार्तिक' पर 'तात्पर्यटीका' इन्होंने लिखी है। इसके मंगलाचरण में

वाचस्पति ने लिखा है-

इच्छामि किमपि पुण्यं दस्तरकुनिबन्ध पंकमग्नानाम्।
उद्योगतकर गवीनाम मतिजरतीनां समुद्धरणातृ।।

-मंगलचरण-2

इससे यह स्पष्ट होता है कि बौद्ध नैयायिकों के द्वारा 'न्याय शास्त्र' की बहुत दुर्दशा हुई थी, और वाचस्पति ने बौद्धों के मत का खण्डन कर 'न्याय शास्त्र' की रक्षा करने के ही लिए तात्पर्य टीका लिखी थी। इसी से भी स्पष्ट है कि बौद्धों के साथ इन लोगों का कितना शास्त्र विचार चला करता था।

आचार्य उदयन: दसवीं सदी में मिथिला के 'करिओन' गाँव में उदयनाचार्य का जन्म हुआ था। इन्होंने 'तात्पर्य टीका' पर 'परिशुद्धि' नाम की बहुत विस्तृत व्याख्या लिखी है। 'न्याय कुसुमांजलि' में इन्होंने बौद्धों के मत का खण्डन कर 'ईश्वर' की पृथक सत्ता का और 'आत्मतत्त्व विवेक' में 'आत्मा' की पृथक् सत्ता का अकाट्य युक्तियों के द्वारा निरुपण किया।[13]
नव्य न्याय: 12वीं शती से न्याय की परम्परा में एक महान परिवर्तन हुआ। इसी समय से नव्य न्याय की नई परम्परा चली। अतः न्याय दर्शन का संपूर्ण इतिहास प्राचीन और नव्य में विभक्त है। नव्य न्याय का इतिहास *1200* ई. में माना जाता है, और यह दर्शन के इतिहास में क्रांतिकारी युग हैं।

श्री जयन्त भट्ट: ग्यारहवीं सदी में जयन्त भट्ट बड़े प्रौद नैयायिक हुए। इन्होंने न्यायसूत्रों पर 'न्यायमंजरी' नाम की एक टीका लिखी। इस ग्रंथ को देखने से पता चलता है कि ये उत्तम कोटि के
व्याख्याकार थे।

श्री वर्धमान उपाध्याय: ये श्री गंगेश उपाध्याय के सुपुत्र थे। इन्होंने 'तत्त्वचिन्तामणि' के ऊपर 'तत्त्वचिन्माणि प्रकाश' टीका लिखी।
इनका प्रमुख ग्रंथ न्यायनिबंध प्रकाश, न्याय परिशिष्ट प्रकाश, न्याय कुसुमांजलिप्रकाश, न्याय लीलावती प्रकाश, प्रमेय निबंध प्रकाश, किरणावली प्रकाश, खण्डन खण्ड खाद्य प्रकाश।

श्री पक्षधर मिश्र: ये भी मिथिला निवासी थे। इनका समय 13वी *श*ताब्दी माना जाता है। इन्होंने

तत्त्वचिन्तामणि पर 'आलोक' नाम की टीका लिखी।

श्री गंगेश उपाध्याय: इन्हें सभी नव्य न्याय का जन्मदाता मानते हैं। ये मिथिला (बिहार) के निवासी थे। इनका जन्म दरभंगा के दक्षिण-पूर्व में कमला नदी के तट पर 'कोटिया' नामक ग्राम में हुआ था। इन्होंने 'गौतम सूत्र' में से 'प्रत्यक्षानुमानोपमान शब्दाः प्रमाणनि'' [14] केवल एकमात्र सूत्र लेकर 'तत्त्वचिन्तामणि' नाम का एक विस्तृत ग्रंथ लिखा। इसमें प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान तथा शब्द इन चारों प्रमाणों में से प्रत्येक प्रमाण के ऊपर भिन्न-भिन्न खण्ड पर विस्तृत व्याख्या की गई है। प्रमाण सूत्र के आधार पर इस ग्रंथ के लिखे जाने के कारण, इसे 'प्रमाण शास्त्र' शास्त्र का मुख्य ग्रंथ कह सकते हैं।

रघुनाथ शिरोमणि: इनका नाम बंगाल के नैयायिकों में लिया जाता है। तर्क विषयक में उत्तम और अद्वितीय के कारण बंगाल की विद्वन्मण्डली ने इन्हें 'शिरोमणि' की 'उपाधि' प्रदान की थी। इनकी सबसे श्रेष्ठ पुस्तक 'दीधिति' है, जो गंगेश के 'तत्त्व चिन्तामणि' की विवरणात्मक टीका है। इस ग्रंथ में इन्होंने अपने दोनों गुरुओं के मतों की आलोचना कर तत्त्व चिन्तामणि की नई व्याख्या की है-

> विदुषां निवैरिहैकमत्याद् यद्दुष्ट निरटंकि यच्च दुष्टम्।
> मयि जल्पति कल्पनाधिनाथे रघुनाथे मनुतां तदन्यथैव।।

मथुरानाथ: शिरोमणि के शिष्यों में मथुरानाथ सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं। इन्होंने 'आलोक' 'चिन्तामणि' तथा 'दीधिति' आदि महत्त्वपूर्ण ग्रंथों पर 'गूढार्थ प्रकाशिनी रहस्य' नाम की टीकाएँ लिखी।

जगदीश भट्टाचार्य: मथुरानाथ के बाद नवद्वीप के सबसे बड़े नैयायिक जगदीश ने 'दीधिति' के ऊपर एक विस्तृत तथा प्रमाणिक टीका लिखी, जो सर्वसाधारण में 'जागदीशी' के नाम से प्रसिद्ध है। इनका समय 1625 ई. माना जाता है।

वासुदेव सार्वभौम: ये नव्य न्याय की नदिया शाखा, बंगाल के संस्थापक माने जाते हैं। ये अपने पिता महेश्वर विशारद से व्याकरण, साहित्य आदि का विधिवत अध्ययन कर मिथिला आए। किम्वदन्ती के अनुसार मिथिलावासी अपनी न्याय विद्या को बाहर नहीं जाने देना चाहते थे। अतः यहाँ रहकर वासुदेव सार्वभौम ने संपूर्ण तत्त्व चिन्तामणि और कुसुमांजलि को कण्ठस्थ कर लिया और काशी आकर उन्हें लिपिबद्ध किया। ये नव्य न्याय को नवद्वीप ले गए। चैतन्य महाप्रभु, रघुनाथ शिरोमणि आदि इनके शिष्य थे।[15]

गदाधर भट्टाचार्य: ये भी बंगाल के उच्च कोटि के न्यायिक माने जाते हैं। इनका जन्म का समय 19वीं शताब्दी के मध्य का है। इनके पिता का नाम जीवाचार्य और गुरु का नाम हरिराम तर्कवागीश था। इन्होंने रघुनाथ की 'दीधिति' पर एक विस्तृत टीका लिखी है, जिसे 'गदाधारी' कहते हैं। इसके अतिरिक्त 'व्युत्पत्तिवाद', 'शक्तिवाद', आदि अनेक मौलिक ग्रंथ हैं।[16]

भारतीय तर्कशास्त्र और पाश्चात्य तर्कशास्त्र में अंतर

महर्षि गौतम का समय लगभग ईसा पूर्व छठी शताब्दी माना जाता है, और अरस्तु का समय ईसा पूर्व चौथी शताब्दी माना जाता है। इस दृष्टिकोण से भी भारतीय तर्कशास्त्र पाश्चात्य तर्कशास्त्र से प्राचीन दिखाई पड़ता है। किन्तु अरस्तु के पहले 'सुकरात' या अन्य पाश्चात्य दार्शनिकों के दर्शन में तर्क विद्या की झलक हमें देखने को मिलती है, परंतु तर्कशास्त्र को एक विषय के रूप में सजाने और संवारने का काम 'अरस्तु' ने ही किया है, इसलिए अरस्तु को ही पाश्चात्य तर्कशास्त्र का जन्मदाता समझा जाता है। हमने भारतीय तर्कशास्त्र का उदभव, अर्थ एव पाश्चात्य तर्कशास्त्र की परिभाषा का अध्ययन किया। जिनमें दोनों में कुछ भिन्नता दिखाई पड़ती है जो निम्नलिखित है।[17]

1. प्रत्यक्ष की दृष्टि से: भारतीय तर्कशास्त्र में 'प्रत्यक्ष' का बहुत ही बड़ा महत्त्व देखने को मिलता है। दूसरी ओर पाश्चात्य तर्कशास्त्र में 'प्रत्यक्ष' को कोई स्थान नहीं दिया गया है। वहाँ पर 'प्रत्यक्ष' का महत्व बतलाना तो दूर रहा बल्कि उसे तर्कशास्त्र के क्षेत्र से बिल्कुल दूर

रखा जाता है।

2. ज्ञान की दृष्टि से: भारतीय तर्कशास्त्र में ज्ञान के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किया जाता है। प्रमा (Real knowledge) के साथ-साथ अप्रमा (Unreal knowledge) के साथ भी भारतीय तर्कशास्त्र का संबंध पाया जाता है। इस तरह भारतीय तर्कशास्त्र का संबंध प्रमा, अप्रमा तथा प्रमाणों सभी से जुटा रहता है।
दूसरी ओर पाश्चात्य तर्कशास्त्र में 'ज्ञान' के जो दो भेद- साक्षात् (Immediate knowledge) और असाक्षात् ज्ञान (Mediate knowledge) के रूप में है, उनमें से केवल 'असाक्षात् ज्ञान' के साथ ही तर्कशास्त्र का संबंध स्थापित किया जाता है। तात्पर्य यह है कि पाश्चात्य तर्कशास्त्र का विषय असाक्षात् ज्ञान ही रहता है, साक्षात् ज्ञान नहीं। अतः ज्ञान का केवल एक ही हिस्सा पाश्चात्य तर्कशास्त्र का विषय बनता है, दोनों नहीं, जबकि भारतीय तर्कशास्त्र ज्ञान के सभी रूपों को अपना विषय बनाए रखता है।

3. स्वरूप की दृष्टि से: भारतीय तर्कशास्त्र का स्वरूप पाश्चात्य तर्कशास्त्र से अधिक विस्तृत है। पाश्चात्य तर्कशास्त्र का संबंध हमारे विचारों को केवल 'शुद्ध' करने से रहता है। 'विचार' का अर्थ अनुमान से लगाया जाता है, इसलिए पाश्चात्य तर्कशास्त्र केवल 'अनुमान का विज्ञान' कहा जा सकता है, जहाँ पर भारतीय तर्कशास्त्र में हम 'अनुमान' के साथ-साथ प्रत्यक्ष, उपमान तथा शब्द का भी अध्ययन करते हैं। इसलिए भारतीय तर्कशास्त्र को भारतीय तर्कशास्त्र एवं प्रमाणशास्त्र के नाम से पुकारा जाता है। तात्पर्य यह है कि भारतीय तर्कशास्त्र के साथ प्रमाणशास्त्र भी जुटा रहता है।

4. अनुमान के वर्गीकरण की दृष्टि से: पाश्चात्य तर्कशास्त्र में 'अनुमान' ही प्रमुख विषय है। अनुमान को मुख्य रूप से दो भागों में बाँटा जाता है- (1) निगमनात्मक अनुमान (Deductive Inference) और (2) आगमनात्मक अनुमान (Inductive Inference) । निगमानात्मक अनुमान को फिर दो भागों में बाँटा जाता है- (अ) साक्षात अनुमान, (ब) असाक्षात अनुमान। फिर आगमनात्मक के भी कई भेद होते हैं- वैज्ञानिक आगमन, अवैज्ञानिक आगमन, पूर्ण आगमन, सादृश्यानुमान (Analogy) आदि।
दूसरी ओर हम यह देखते हैं कि भारतीय तर्कशास्त्र में अनुमान सबसे प्रमुख नहीं माना जाता है। इसका स्थान 'प्रत्यक्ष' के बाद ही आता है। उसके बाद 'अनुमान' का जो विभाजन पाश्चात्य तर्कशास्त्र में किया जाता है, वह भारतीय तर्कशास्त्र में बिल्कुल नहीं पाया जाता है। भारतीय तर्कशास्त्र में 'अनुमान' की व्याख्या एक तरह से नहीं की गई है, बल्कि तीन दृष्टिकोणों से किया गया है।

5. तर्कशास्त्र के वर्गीकरण की दृष्टि से: पाश्चात्य तर्कशास्त्र में तर्कशास्त्र को दो भागों में बाँटा जाता है- (1) निगमन तर्कशास्त्र (Deductive Logic) और (2) आगमन तर्कशास्त्र (Inductive Logic) निगमन तर्कशास्त्र में आधार वाक्यों को पहले से ही सत्य मानकर उससे कुछ नया अनुमान निकाला जाता है,

जैसे- सभी मनुष्य मरणशील हैं,
राम मनुष्य है
इसलिए राम मरणशील है।

आगमन तर्कशास्त्र में कुछ उदाहरणों के निरीक्षण के बल पर एक सामान्य वास्तविक वाक्य की स्थापना करते हैं, जैसे-राम, सोहन, मोहन आदि कुछ मनुष्यों को मरते देखकर उनसे अनुमान करते हैं कि "सभी मनुष्य मरणशील हैं।" निगमन तर्कशास्त्र का संबंध आकारिक सत्यता से बतलाया जाता है और आगमन तर्कशास्त्र का संबंध वास्तविक सत्यता से ।
दूसरी ओर भारतीय तर्कशास्त्र में निगमन और आगमन के रूप में कोई भी विभाजन हमें देखने को नहीं मिलता है। भारतीय दृष्टिकोण से 'तर्कशास्त्र' को इसकी पूर्ण इकाई में अध्ययन किया जाता है। तर्कशास्त्र का उद्देश्य वास्तविक सत्यता की स्थापना है, इसलिए तर्कशास्त्र को निगमन और आगमन में बाँटने की आवश्यकता भारतीय तर्कशास्त्र बिल्कुल ही नहीं समझता। अतः भारतीय अनुमान जो हमें देखने को मिलता है, उसे हम निगमन और आगमन का मिला-जुला रूप कह सकते हैं।

6. सत्यता की दृष्टि से: पाश्चात्य तर्कशास्त्र में तर्कशास्त्र का उद्देश्य 'सत्य' को प्राप्त करना आवश्यक बतलाया जाता है, परंतु वहाँ 'सत्य' को दो भागों में बाँटा जाता है- (1) आकारिक सत्यता (Formal truth) और (2) वास्तविक सत्यता (Material Truth) । आकारिक सत्यता उन विचारों में पायी जाती है जो केवल आकार (Form) के रूप में दिमाग में बने रहते हैं, और जिनसे मिलता-जुलता पदार्थ संसार में हमें देखने को नहीं मिलता, जैसे- सोने की चिड़िया, दूध की नदी आदि। वास्तविक सत्यता उन विचारों में पाई जाती है, जो दिमाग में विचारों के रूप में बना रहता है, साथ ही उनसे मिलता हुआ पदार्थ भी हमें देखने को मिलता है, जैसे-लकड़ी का टेबल, ईंट का मकान, पानी का नदी आदि। पाश्चात्य विद्वानों का कहना है कि तर्कशास्त्र के एक भाग निगमन' (Deduction) का संबंध केवल आकारिक सत्यता (Formal Truth) से रहता है, और तर्कशास्त्र के दूसरे भाग आगमन' (Induction) का संबंध वास्तविक सत्यता (Material truth) से जुटा रहता है। तात्पर्य यह है कि पाश्चात्य तर्कशास्त्र 'सत्य' को दो भागों में बाँटकर उसका अलग-अलग अध्ययन करता है।

दूसरी ओर भारतीय तर्कशास्त्र में ऐसी बात नहीं पाई जाती है। भारतीय तर्कशास्त्र 'सत्य' (Truth) को आकारिक और वास्तविक के रूप में दो भागों में नहीं बाँटता, बल्कि उनके सम्मिलित रूप का अध्ययन करता है। वहाँ 'सत्य' को एकपूर्ण इकाई में समझा जाता है बल्कि यों कहाँ जाए कि भारतीय तर्कशास्त्र 'वास्तविक सत्यता' की ही स्थापना करना अपना चरम उद्देश्य समझता है, जिसके भीतर आकारिक सत्यता तो अपने ही आप छिपी रहती है। इसलिए 'सत्य' का आकारिक और वास्तविक के रूप में विभाजन भारतीय तर्कशास्त्र को बिल्कुल ही स्वीकार नहीं है, जबकि यह विभाजन पाश्चात्य तर्कशास्त्र में ही बिल्कुल ही प्रमुख है।

7. पाश्चात्य तर्कशास्त्र के दृष्टिकोण से:- किसी 'न्याय वाक्य' (Syllogism) में केवल तीन ही वाक्यों की आवश्यकता पड़ती है, दूसरे शब्दों में यो कहें कि पाश्चात्य तर्कशास्त्र में न्याय वाक्य के लिए एक सामान्य नियम ही है कि प्रत्येक न्याय वाक्य में तीन और केवल तीन ही तार्किक वाक्य चाहिए। उदाहरण

1. सभी मनुष्य मरणशील हैं- वृहत् वाक्य (Major Premise)
2. राम मनुष्य है-लघु वाक्य लघु वाक्य (Minor Premise)
3. इसलिए राम मरणशील है - निगमन (Conclusion) दूसरी ओर भारतीय तर्कशास्त्र में न्याय वाक्य (Syllogism) क लिए पाँच तार्किक वाक्य चाहिए. इसलिए भारतीय न्याय वाक्य को गौतम ने पंचावयव' के नाम से पुकारा जाता है। पंचावयव' का अर्थ होता है जिससे पाँच वाक्य या पाँच प्रकार होते हैं-

उदाहरण

1. राम मरणशील है (प्रतिज्ञा)
2. क्योंकि राम मनुष्य है (हेतु)
3. सभी मनुष्य मरणशील हैं, जैसे- मोहन, सोहन, आदि (व्याप्ति वाक्य)
4. राम भी मनुष्य है (उपनय)
5. इसलिए राम मरणशील है – (निगमन)

8. पाश्चात्य तर्कशास्त्र के न्याय वाक्य में: उदाहरण देने की आवश्यकता नहीं बतलाई जाती है। वहाँ वृहत वाक्य के रूप में एक सामान्य बात कह दी जाती है, उसमें उदाहरण नहीं रहता।

दूसरी ओर भारतीय तर्कशास्त्र में 'व्याप्ति वाक्य' के साथ एक उदाहरण भी दिया जाता है, क्योंकि इससे निगमन (Conclusion) की निश्चयता प्रकट होती है।"

उपर्युक्त वालों से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय तर्कशास्त्र, पाश्चात्य तर्कशास्त्र से भिन्न अपना एक विशेष स्थान रखता है।

न्याय शास्त्र का प्रकरण ग्रंथ: प्रकरण ग्रंथ न्याय शास्त्र की एक विशेष परम्परा है। प्रकरण का अर्थ है-

शास्त्रैकदेशसम्बद्ध शास्त्रकार्यान्तरे स्थितम् ।
आहुः प्रकरण' नाम ग्रंथभेद विपोश्रिता ।।
-पराशर उप पुराण- 2/27

अर्थात् जिस ग्रंथ में किसी एक शास्त्र के प्रतिपाद्य

विषयों में से किसी एक ही विषय की प्रमुखता का प्रतिपादन होता है और उस विषय के अतिरिक्त अन्य विषयों को प्रयोजन एवं देशकाल के अनुसार समावेश किया जाता है, तो उसे प्रकरण कहते हैं। न्याय शास्त्र के प्रकरण ग्रंथों के चार विभाग हैं जो निम्नलिखित हैं[20]

प्रथम विभाग के प्रकरण ग्रंथ: इनमें प्रमाण पदार्थ का मुख्य रूप से और अन्य पदार्थों का गौण रूप से प्रतिपादन होता है।

भासर्वज्ञ: इन्हें कश्मीर का निवासी माना जाता है विद्वानों की मान्यता है कि जैन विद्वान् गुणरत्न (14वीं शती) की षड्दर्शनवृति' तथा मलधारी राजशेखर (14वीं शती) के षड्दर्शन समुज्जम में भासर्वज्ञ का उल्लेख है। बौद्ध विद्वान् रत्नकीति की अपोहसिद्धि' में न्यायसार की प्रसिद्ध टीका न्याय भूषण' का उल्लेख है। न्याय सार भासर्वज्ञ का प्रकरण ग्रंथ है- इसका आरंभ इस प्रकार है-

> प्रणम्य शम्भु जगतः पतिं परं समस्ततत्त्वार्थाविंद स्वभावतः ।
> शिशुप्रबोधाय मयामिधास्यते प्रमाण तद् भेद तदन्यलक्षणम्।।

इसमें प्रमाण के तीन भेद माने गए हैं-प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द। प्रत्यक्ष- इसके दो भेद हैं- यौगिक और लौकिक। यौगिक प्रत्यक्ष के दो भेद हैं- युक्त और अयुक्त। अयुक्त के दो भेद हैं- आर्य और अनार्य । लौकिक प्रत्यक्ष के छः भेद हैं- ध्राणज, रासन, चाक्षुष, स्पार्शन श्रावण और मानस।

अनुमान: अनुमान के दो भेद माने गए हैं- स्वार्थ और पदार्थ

शब्द: शब्द के दो भेद हैं- दृष्टार्थक (लौकिक आप्तकाय) अदृष्टार्थक (वेद वाक्य) ।

द्वितीय विभाग के प्रकरण ग्रंथ: इनमें न्याय दर्शन के प्रमाण प्रमेय आदि सोलह पदार्थों के साथ वैशेषिक के छः पदार्थों का वर्णन है।

श्री वरदराज: ये आन्ध्र प्रदेश के निवासी थे इनका प्रसिद्ध तार्किकरक्षा' है। इस पर सार संग्रह' नामक स्वतः उनकी लिख व्याख्या है।

श्री केशव मिश्र: ये मिथिला निवासी थे इनका सुप्रसिद्ध ग्रंथ तब भाषा है, जो न्याय शास्त्र को समझने के सुगम हैं-

> बालोऽपियो न्यायनये प्रवेशमल्पेन बाछत्यलसः श्रुतेन ।
> संक्षिप्तयुक्त्यान्वितर्तक भाषा प्रकाश्यते तस्य कृते मयैषा ।।
>
> - तर्कभाषा-1

तर्क भाषा न्याय दर्शन के बारह प्रमेयों में चौथे प्रमेय के म वैशेषिक के द्रव्य आदि छः पदार्थों का समावेश है। इस ग्रंथ पर अने टीकाएँ हैं, जैसे- गोपीनाथ की उज्ज्वला, रामलिंग का न्याय संग्रह बालचन्द की तर्कभाषा प्रकाशिका आदि।

तृतीय प्रकार के प्रकरण ग्रंथ: इस वर्ग में न्याय शास्त्र के ए ग्रंथ हैं, जिनमें न्याय के प्रमाणों को वैशेषिक के पदार्थों के अंतर्ग प्रतिपादन कया गया है।

श्री वल्लभाचार्य: इनका समय 10वीं और 13वीं शती के मध्य माना जा सकता है, अधिकांश विद्वान इनका समय 12वीं शती मानते हैं। इनका सुप्रसिद्ध ग्रंथ न्याय लीलावती' है। इसमें एक पद्य द्वारा पत्नीरूप और ग्रंथरूपा लीलावती' का वर्णन किया गया है।[21]

> दव्यं नाधिकमुज्ज्वलो गुणगणः कर्माधिकं श्लाध्यते
> जातिर्विप्लुतमागता न च पुनः श्लाध्या विशेषास्थितिः।
> सम्बन्धः सहजो गुणदिभिरयं यत्रास्तु सत्प्रीयते
> सान्वीक्षानयवेश्म कर्म कुशला श्री न्याय लीलावती।।
>
> न्याय लीलावती 2/5

इस ग्रंथ में वैशेषिक के छः पदार्थों में गुण वर्ग में

परिगणित बुद्धि का भेद बतलाकर विद्या साधन रूप में न्याय के चार प्रमाणों का उल्लेख किया गया है। इस पर अनेक टीका ग्रंथ है, जैसे- रघुनाथ शिरोमणि की न्याय लीलावती दीधिति, वर्धमान उपाध्याय का न्याय लीलावती ग्रंथ, मथुरानन्द का न्याय लीलावती प्रकाश विवेक आदि।

श्री अन्नभट्ट: इनका समय *17*वीं शताब्दी माना जाता है। ये आन्ध्र प्रदेश के निवासी थे, परंतु जीवन पर्यन्त काशी में रहे। इनका ग्रंथ 'तर्कसंग्रह' अत्यन्त लोकप्रिय हैं-

निधाय हृदि विश्वेशं विधाय क्रियते गुरुवन्दनम्।
बालानां सुखबोधाय क्रियते तर्कसंग्रहः ।।
कषाद न्यायमत योर्बाल व्युत्पत्ति सिद्धये ।
अन्नभट्टेन विदुषा रचितस्तर्क संग्रहः ।।
- तर्क संग्रह आरंभ एवं अन्त

इन्होंने तर्क संग्रह में वैशेषिक के सात पदार्थों का उल्लेख कर बुद्धि के अंतर्गत प्रमाणों का विवेचन किया है।

भास्कर: इनका समय 17वीं शताब्दी है। ये काशी के निवासी थे। इनका सुप्रसिद्ध ग्रंथ "तर्क कौमुदी" है। इस ग्रंथ में द्रव्य, गुण आदि सात पदार्थों का उल्लेख कर बुद्धि को आत्मा का गुण माना गया है, और बुद्धि का भेद, अनुभव और स्मृति मानकर अनुभव के अंतर्गत चार प्रमाणों का उल्लेख है।[22]

चतुर्थ प्रकार के प्रकरण ग्रंथ
श्री शशधर: इनका ग्रंथ "न्याय सिद्धांत दीप है इसमें न्याय और वैशेषिक के विषयों का वर्णन किया गया है।[23]

भारतीय तर्क शास्त्र का महत्व: भारतीय दर्शन एवं परम्परा में तर्कशास्त्र या न्याय शास्त्र का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। न्याय शास्त्र के इतिहास की ओर दृष्टि डालने से ऐसा प्रतीत है न्याय शास्त्र की तर्क विद्या प्रत्येक भारतीय दार्शनिक के जीवन का एक विशेष अंग है। यदि वास्तव में देखा जाए तो न्याय शास्त्र का उद्देश्य है किसी वस्तु का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना। परंतु आज आधुनिक युग में न्याय शास्त्र का प्रयोग लोग अपनी विद्वता एवं चतुराई को प्रकट करने में करते हैं। परंतु यथार्थ में न्याय शास्त्र का केवल एक ही उद्देश्य नहीं है, बल्कि वास्तविक न्यायिक तो वह है जो तत्व अथवा वास्तविक ज्ञान का जिज्ञासु हो न्याय दर्शन व्यक्तिगत लाभ की तनिक भी परवाह नहीं करता, बल्कि वह सत्य के सार्वभौमिक स्वरूप को स्वीकार करता है।
न्याय शास्त्र का प्रमुख उद्देश्य यह है कि "प्रमाण द्वारा ज्ञान के सत्य या असत्य होने की परीक्षा करना। इसलिए भारतीय तर्कशास्त्र या न्याय शास्त्र को 'प्रमाण शास्त्र' या 'परीक्षा शास्त्र' भी कहते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. नैषा तर्केण मतिरापयेना
   प्रोक्तोन्येनैव सुज्ञानाय श्रेष्ठ।
   यां त्वमापः सत्यधृतिर्बतासि
   त्वादृङ नो भूयार्नचकेतः प्रष्ठा ।। - कठोपनिषद् 1-2-9
2. तर्काप्रतिष्ठानात् - ब्रह्मसूत्र 2-1-11
3. वाक्यपदीय (भर्तृहरि) - 1-34
4. प्रमाणामनुग्राहक कस्तर्क : न्याय भाष्य-1-1-1
5. सिंह एवं सिंह, तर्कशास्त्र एवं प्रमाण शास्त्र, पृष्ठ संख्या 1, ज्ञानदा प्रकाशन, दिल्ली, सन् 1992
6. शरीरवाङ् मनोभिर्यत्कम प्रारभते नरः । न्यायं वा विपरीतं वा पंचैते तस्य हेतवः ।। गीता-18/15
7. (क) वृहदारण्यक्-2-4-5
   (ख) छान्दोग्य-7-1-2
   (ग) अयोध्याकाण्ड (श्री चरित मानस) - 100-39
   (घ) शांति पर्व, महाभारत- 180-47
8. न्याय भाष्य (वात्स्यायन) - 2/4
9. प्रमाण मीमांसा (डॉ. बद्रीनाथ सिंह), आशा प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 4 सन् 1999
10. वही, पृष्ठ संख्या 6
11. न्याय भाष्य अंग्रेजी अनुवाद की भूमिका (पंडित गोपी नाथ कविराज)
    पृष्ठ संख्या 1-18, कलकत्ता प्रेस, कलकत्ता ।
12. भारतीय दर्शन (प्रो. उमेश मिश्र) पृष्ठ संख्या 180, प्रकाशक उत्तर प्रदेश संस्थान, लखनऊ, सन् 19571

13. तर्काम्बराड़क प्रमितेष्वतीतेषु शकान्ततः ।
वर्षेदयनंश्रक्रे सुबोधा लक्षणावलीम ।। - न्याय कुसुमाज्जलि, भूमिका (उदयन) 2
14. भारतीय-तर्कशास्त्र (डॉ. प्रवीण कुमार गुप्त, डॉ. जितेन्द्र नाथ पाण्डेय) प्रथम संस्करण, सन् 2013 पृष्ठ 13, सत्यम पब्लिशिंग हाऊस एन-3/25, मोहन गार्डन, उत्तम नगर नई दिल्ली
15. भारतीय दर्शन (आचार्य बलदेव उपाध्याय) पृष्ठ 174
16. वही, पृष्ठ संख्या, 175
17. सिंह और सिंह, तर्कशास्त्र शास्त्र एवं प्रमाण शास्त्र, पृष्ठ संख्या 4
18. वही, पृष्ठ संख्या 8
19. वही, पृष्ठ संख्या 9
20. प्रमाण मीमांसा (डॉ. बद्रीनाथ सिंह) पृष्ठ संख्या 15
21. (क) वही, पृष्ठ संख्या 17
(ख) तर्क भाषा (हिन्दी व्याख्या) बद्रीनाथ शुक्ल, पृष्ठ 28
22. वही, पृष्ठ संख्या-19 23. तर्क भाषा (केशव मित्र) पृष्ठ 91, 92
23. तत्त्वचिन्तामणि (गंगेश उपाध्याय) -1-1-3